IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श एक ज्वलंत मुद्दा

डॉ कुमारी सुजाता

सहायक आचार्य

हिन्दी विभाग

राजकीय महाविद्यालय अम्ब ,ज़िला ऊना (हि.प्र.) भारत

सारांश:

हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श, जिसमें नारी जीवन की अनेक समस्याएं देखी जा सकती हैं,वह वर्तमान समय का एक ज्वलंत मुद्दा बन गया है। हिन्दी साहित्य में प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल के छायावाद तक स्त्री-विमर्श की लहर देखने को मिलती है। महादेवी वर्मा की श्रृंखला की कड़िया नारी सशक्तिकरण का सबसे सुन्दर उदाहरण है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक स्त्री विमर्श के मुद्दे उठे हैं। उन पर सभी लेखकों ने खुल कर अपने विचार भी रखे पर फिर भी स्त्री की दशा में किसी भी तरह का परिवर्तन दिखायी ना दिया। परिवर्तन हुआ भी तो आंशिक रूप में और यह सर्वविदित बात है कि स्त्री और पुरुष समाज में चाहे समान समझे जाते हैं परंतु अंतर यह है कि एक ज्यादा शोषित है और एक अत्यधिक स्वतंत्र है। स्त्रियों के बारे में यदि देखा जाए तो पहला वर्ग उन स्त्रियों का है जो आत्मनिर्भर एवं बुद्धिजीवी हैं। वे पुरुषों से कंधे कंधा मिलाकर चलती हैं और उनकी प्रतिभा और लगन पुरुष को उनसे निम्नतर होने का बोध कराती है लेकिन ऐसी औरत को मर्दाना औरत का नाम देकर दबाने और अपमानित करने का काम पुरुष वर्ग करता है। उन्हें हर कदम पर चुनौतियों को सामना करना पडता है। दूसरा वर्ग उन स्त्रियों का है जो पढी लिखी हैं और उनके लिए परंपरा और नैतिकता सबसे महत्वपूर्ण है। समाज की ऐसी मानसिकता में उनको पाला जाता है कि वे पुरुषों के हर जुर्म को बिना विरोध किए पुरुष के अमानवीय व्यवहार को सहकर सबको खुश रख सके। समाज में इनकी संख्या बहुत ज्यादा है और सबसे ज्यादा शोषण इन्हीं के साथ हो रहा है। तीसरा वर्ग अशिक्षित और गरीब स्त्रियों का है जो अपने परिवार की भूख मिटाने के लिए पूरी आयु मेहनत करने के बाद अपने बारे में सोचने के लिए उनके पास दम नहीं और इनका शोषण पूरा समाज करता है।चौथे वर्ग में ऐसी स्त्रियाँ है जो समाज कल्याण के कार्यों द्वारा समाज को सही दिशा देने का कार्य कर रही हैं। इनमें लेखिकायें भी हैं जो स्त्री के भविष्य को सुंदर बनाने का प्रयत्न कर रही हैं। स्त्री साहित्य स्त्री की अनुभूति का साहित्य है। स्त्री साहित्य ने स्त्री की अस्मिता और अनुभवों को केंद्रीय महत्व दिया। आधुनिक कालीन स्त्री साहित्य का श्रीगणेश कथा साहित्य से होता है। स्त्री की अस्मिता और राष्ट्र की

अस्मिता को पर्याय के रुप में लेखिकाओं ने प्रस्तुत किया। समकालीन परिवेश में महिला लेखिकाओं ने स्त्री समाज की त्रासदी और विडंबना,उसकी शोषित स्थिति,उसकी सामाजिक,आर्थिक-पराधीनता , रुढिग्रस्त मान्यताओं एवं धारणाओं से जुडे प्रश्नों को खुले,तीखे एवं साहसपूर्ण ढंग से अपने साहित्य के माध्यम से पाठक वर्ग के सामने रखा है। उषा प्रियंवदा,कृष्णा सोबती,मन्नूभंडारी,ममता कालिया आदि वरिष्ठ लेखिकाओं से लेकर पिछले दो दशकों के दौरान इस क्षेत्र में अधिक सक्रिय एवं चर्चित मैत्रेयी पुष्पा,मृदला गर्ग,नासिरा शर्मा,सूर्यबाला,राजी सेठ,प्रभाखेतान,मृणालपाण्डे,अनामिका,कात्ययनी की एक लंबी परंपरा है जिन्होंने अपनी रचनाओं में ऐसी स्त्री पात्रों को प्रमुखता दी है जो अपनी स्वतंत्र सोच रखती हैं। उनकी रचनाओं में चित्रित स्त्री हमारे समय की वास्तविक स्त्री है। उसकी नियति को ,आत्म-संघर्ष को,अस्मिता को,मुक्ति चेतना को हमारे युग की जटिलताओं के संदर्भ में जानने का जो प्रयास किया है वह हमारे विमर्श का आधार बनना जरुरी है। वास्तव में यही स्त्री विमर्श है।

मुख्य शब्द: नारी जीवन, शोषण, स्त्री विमर्श, स्त्री अस्मिता, नारी सशक्तिकरण।

स्त्री विमर्श उस साहित्यिक आंदोलन को कहा जाता है जिसमें स्त्री अस्मिता को केंद्र में रखकर संगठित रूप से स्त्री साहित्य की रचना की गई। हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श अन्य अस्मितामूलक विमर्शों के भांति ही मुख्य विमर्श रहा है जो कि लिंग विमर्श पर आधारित है। स्त्री विमर्श को अंग्रेजी में फेमिनिज्म कहा गया है।हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श जिसमें नारी जीवन की अनेक समस्याएं देखने को मिलती हैं।हिंदी साहित्य के सम्पूर्ण इतिहास के शुरुआती काल में भी स्त्री विमर्श देखने को मिला। पर उस समय साहित्य में स्त्री को इतना महत्व नहीं दिया गया न ही साहित्य में नारी की अस्मिता को लेकर लेखनी की गयी। चिंतन की दृष्टि से देखा जाए तो हिन्दी साहित्य में छायावाद काल से स्त्री-विमर्श का जन्म माना जाता है।वस्तुतः स्त्री विमर्श के अन्तर्गत यही है कि "समाज में नारी के स्थान को लेकर चिंतन,स्त्री के सम्पूर्ण अधिकारों का चिंतन,स्त्री की आर्थिक ,मानसिक एवं शारीरिक अवस्थाओं पर चिंतन। इन तमाम चिंतनों के द्वारा पुरुष के समकक्ष स्त्री को उसकी सम्पूर्ण गरिमा के साथ स्थायित्व प्रदान करने के विचार ही स्त्री विमर्श है।"१ संस्कृत भाषा के पवित्र वेदों में और धार्मिक पुस्तकों में भी नारी की गरिमा देखने को मिलती है।फिर प्रश्न यह उठता है कि दिन - प्रतिदिन नारी की स्थिति क्यूँ ख़राब होती चली गयी। हिंदी साहित्य का आदिपक्ष काव्य धार्मिक उपदेशों एवं वीर गाथाओं के रूप में लिखा गया है।जिसमें पहला वीरकाव्य के रूप में दूसरा मधुर भक्ति के रूप में। तत्कालीन परिस्थितियों एवं वातावरण के अनुसार वीरगाथा काल में नारी के कामिनी एवं वीरांगना रूप दृष्टिगत होते हैं। इस समाज के काव्य में "जाकी बिटिया सुन्दर देखी ताहि पै जाए धरे तलवार"२ .वाली कहावत चरितार्थ होती है। उस समय स्त्री संघर्ष के बीज के रूप में थी क्योंकि स्त्रियों के कारण राजा-महाराजाओं के भी युद्ध हो जाते थे। वीर-पत्नी अपने जीवन की सार्थकता अपने स्वामी के वीरोचित कर्मों में ही समझती थी। यदि उसका पति वीरगति को भी प्राप्त हो जाए तो वह उसके साथ ही मरने को तैयार हो जाती थी। आधुनिककाल में महादेवी वर्मा की श्रृंखला की कड़ियाँ नारी सशक्तिकरण का सुन्दर उदाहरण है। स्त्री विमर्श स्त्रियों को उपेक्षित जीवन से सशक्तिकरण की तरफ ले

जाने का काम कर रहा है । हिन्दी साहित्य के आदिकाल में नारी के वीरांगना और कामिनी दोनों रूप देखने को मिलतें हैं, लेकिन उसका स्वतंत्र व्यक्तित्व कहीं दिखाई नहीं देता। हिंदी साहित्य के आदिकालीन युग)संवत् 1050-1375(में नारियों पर कई तरह की बंदिशे लगाई गई। उस वक्त सती प्रथा का जोर था। युद्ध का कारण भी महिलाओं को ही समझा जाता था। इस काल में कोई महिला साहित्यकार सामने नहीं आई लेकिन उसके बाद अन्य सभी कालों में महिलाओं ने साहित्य के लेखन कार्य में योगदान दिया। हालांकि ये लेखन ऐसे नहीं थे जिनमें महिलाओं के अधिकार या उसके नारीजीवन को एकल रूप में देखा गया हो। भक्तिकाल में भी कई महिला कवित्रियाँ हुई और इन कवित्रियों ने कविताएं भी लिखी।जिसमें भक्तिकालीन साहित्य में सहजोबाई ,दयाबाई ,ललद्यद और मीराबाई का नाम विशेष है।आधुनिक काल में भी नारी जीवन को आधार बना कर लेखनों ने कलम चलायी। भारतेंदु ने स्त्री-शिक्षा के प्रचार हेतु 'बालवबोधिनी' नामक पत्रिका का प्रकाशन किया तथा नर-नारी समानता एवं नारी मुक्ति का नारा दिया। इस युग में कवियों ने इस बात पर बल दिया है कि नारी ही मानव एवं समाज का सुधार कर सकती है। इस विषय में रायदेवी प्रसाद पूर्ण की निम्न पंक्तियाँ हैं -"नारी के सुधारे होत जग में प्रसिद्ध ,नारी के संवारे होत सिद्ध धन बल है। 'कहने का तात्पर्य यह है कि आधुनिक काल में स्त्री को थोड़े सम्मान की दृष्टि से देखा जाने लगा। उसे 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी 'अर्थात माता और जन्म भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है ,कहा जाने लगा।इस तरह नारी की गरिमा बढ़ने लगी।

वस्तुतः स्त्री विमर्श स्त्रियों को उपेक्षित से सशक्तिकरण की तरफ ले जाने का काम कर रहा है । स्त्री विमर्श के प्रश्नों ने समाज को नई विचारधारा से सोचने के आयाम दिये हैं ।जिसके फ़लस्वरूप समाज में एक नई ऊर्जा आयेगी जो केवल समानता पर आधारित होगी । स्त्री विमर्श में समय के साथ नये प्रश्न जुड़ते जा रहे है और उनको हल करना हम सभी का दायित्व है।

प्रेमचंद से लेकर आधुनिक समय तक अनेक पुरूष लेखकों ने स्त्री समस्या को अपना विषय बनाया लेकिन उस रूप् में नहीं लिखा जिस रूप् में स्वयं महिला लेखिकाओं ने लिखा है। अतः स्त्री-विमर्श की शुरूआती गुंज पश्चिम में देखने को मिली। सन् **1960** ई. के आस-पास नारी सशक्तिकरण ने अत्यधिक जोर पकड़ा जिसमें चार नाम चर्चित हैं। उषा प्रियम्वदा, कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी एवं शिवानी आदि लेखिकाओं ने नारी मन की अन्तद्र्वन्द्वों एवं आप बीती घटनाओं को उकरेना शुरू किए और आज स्त्री-विमर्श एक ज्वलंत मुद्दा है।इसके बाद भी हिंदी साहित्य की महिला कथाकारों ने नारी जीवन को आधार बना कर नवीन साहित्य रचा।कृष्णा सोबती ,मैत्रेयी पुष्पा,चित्रा मुद्ग़ल आदि ने भी नारी जीवन पर लिख कर अपनी पहचान बनायी।

आठवें दशक तक आते-आते यही विषय एक आन्दोलन का रूप ले लिया जो शुरूआती स्त्री-विमर्श से ज्यादा शक्तिशाली सिद्ध हुआ। आज मैत्रेयी पुष्पा तक आते-आते महिला लेखिकाओं की बाढ़ सी आ गयी जो पितृसत्ता समाज को झकझोर दिया। नारी मुक्ति की गुंज अब देह मुक्ति के रूप में परिलक्षित होने लगा। वर्तमान समय तो अनगिनत महिला लेखिकाएँ लिख रही है और उनका ज्वलंत विषय

नारी ही रहा है। साहित्य में नारी का प्रत्येक रूप देखने को मिला जैसे कि पहले भी कहा गया है की आधुनिक काल में ही नारी विमर्श देखने को मिलता है पर समय के साथ – साथ आधुनिक काल में नारी विमर्श ने ज़ोर पकड़ा।

प्रेमचन्द से लेकर रेणू और राजेंद्र यादव तक अनेक पुरूष लेखकों ने नारी समस्या को उकेरा है लेकिन उस रूप में नहीं जिस रूप में स्वयं महिला लेखिकाओं ने लेखनी चलायी है, क्यूँकि महिला लेखिका नारी की वेदना से भली भाँति परिचित दिखायी दीं हैं। इन्होंने नारी मन के छिपी शक्तियों को पहचाना और नारी की दिशाहीनता, दुविधाग्रस्तता, कुण्ठा आदि का विश्लेषण किया।

समाज के दो पहलू जिसमें स्त्री-पुरूष एक दूसरे के पूरक हैं। किसी एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व नहीं है। उसके बाद भी पुरूष समाज ने महिला समाज को अपने बराबर के समानता से वंचित रखा। यही पक्षपात दृष्टि ने शिक्षित नारियों को आंदोलन करने को मजबूर किया जो आज ज्वलंत मुद्दा नारी-विमर्श के रूप में दृष्टिगोचर है।

आदिकाल से ही नारियों की दशा दयनीय एवं सोचनीय थी। स्त्रियों की दशा को देखकर विवेकानंद कहते हैं"– स्त्रियों की अवस्था को सुधारे बिना जगत के कल्याण की कोई सम्भावना नहीं है। पक्षी के लिए एक पंख से उड़ना सम्भव नहीं है।"३ विवेकानंद जी ने महिला समाज की वास्तविक दशा को इस कथन में उभारा है। उन्होंने यह बात स्वीकारी थी कि उस समय की महिलाएँ अशक्त नहीं थी।इसी तरह अनेक महिला कथाकारों ने भी यह स्वीकारा है कि प्राचीन समय में नारी अबला रही है।

सुशीला टाकभौरे के काव्य संग्रह स्वातिबूंद और खारे मोती तथा यह तुम भी जानों काफी चर्चित रहे हैं। इनकी विद्रोहणी कविता में आक्रोश की ध्वनि सुनाई पड़ती है -

"मां-बाप ने पैदा किया था गूंगा
परिवेश ने लंगड़ा बना दिया
चलती रही परिपाटी पर
बैसाखियां चरमराती हैं।
अधिक बोझ से अकुलाकर
विस्कारित मन हुंकारता है
बैसाखियों को तोड़ दूं।"४

उपर्युक्त कविता स्त्री-जीवन की वास्तविकता को समाज के सामने रखती है। नारी जीवन के यथार्थ को प्रकट करती है।

स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी गद्यकार एवं कवि रघुवीर सहाय जी ने नारी जीवन का वास्तविक चित्र खिंचा है, उन्होंने अपने काव्य में स्वतंत्रता के बाद स्त्री जीवन की अनेक समस्याओं को विषय बनाया है। जिस भारत में स्त्री वैदिक काल में "यत्र नार्यस्तु पूज्यंते तत्र रमंते देवता" कहा जाता था। आज वही अनेक शोषण का शिकार हो रही हैं। वह कहता है -

"नारी बेचारी है

पुरूष की मारी
तन से क्षुदित है
लपक कर झपक कर
अंत में चित्त है।"५

प्रस्तुत पंक्ति में कवि वर सहाय जी नारी को बेचारी कहकर उसकी दयनीय दशा का वर्णन किया है जो अपने अधिकारों के लिए लड़ नहीं पाती। लेकिन वर्तमान में यह स्थिति परिवर्तित नजर आती है।वर्तमान समय में देखा जाए तो नारियाँ भी आज किसी क्षेत्र में पीछे नहीं हैं। उन्होंने वो मुक़ाम हासिल किया है जो हर किसी के वश की बात नहीं। भारत सरकार ने सन् **2001**को महिलाओं के सशक्तिकरण वर्ष के रूप में घोषित किया। अब नारी अपनी हरेक अधिकार को लेकर रहेगी। यही लड़ाई स्त्री-विमर्श या नारी सशक्तिकरण के रूप में परिलक्षित होती है।

स्त्री लेखिकाओं का हिंदी साहित्य में अविस्मरणीय योगदान रहा है।हिंदी साहित्य की प्रत्येक महिला लेखिका ने अपने दर्द,अपनी वेदना,अपनी पीड़ा,अपनी यातनाएँ,अपने मर्म को सभी नारियों में देखा और उनका बहुत ही सटीकता के साथ साहित्य में वर्णन किया है।पुरुषों की दासता ने महिलाओं की आवाज़ को बुलंद किया। जिसके परिणामस्वरूप नारी ने बेड़ियों से निकल कर आवाज़ उठायी।
हिन्दी कथा साहित्य में नारी विमर्श का जोर आठवें दशक तक आते-आते एक आंदोलन का रूप ले लिया। आठवें दशक की महिला लेखिकाओं में उल्लेखनीय हैं -ममता कालिया, कृष्णा अग्निहोत्री, चित्रा मुद्गल, मणिक मोहनी, मृदुला गर्ग, मुदुला सिन्हा, मंजुला भगत, मैत्रेयी पुष्पा, मृणाल पाण्डेय, नासिरा शर्मा, दिसी खण्डेलवाल, कुसुम अंचल, इंदू जैन, सुनीता जैन, प्रभाखेतान, सुधा अरोड़ा, क्षमा शर्मा, अर्चना वर्मा, नमिता सिंह, अल्का सरावगी, जया जादवानी, मुक्ता रमणिका गुंसा आदि सभी लेखिकाओं ने नारी मन की गहराईयों, अन्तद्र्वन्द्वों तथा अनेक समस्याओं का अंकन संजीदगी से किया है।
आंदोलनकारी स्त्री विमर्श हमारे यहां स्पष्ट रूप से 7वें दशक के बाद दिखाई देता है।नवजागरण काल में समाज सुधार आंदोलनों का मुख्य फ़ोकस घर की चारदीवारी के भीतर बंद स्त्री को शिक्षा का अधिकार देने के साथ-साथ उसे अमानवीय सामाजिक कुप्रथाओं से मुक्ति दिलाने के प्रयासों पर था। 20वीं सदी के पूर्वार्ध से देश की आजादी के लिए जन-आंदोलन तीव्र होने लगे।महात्मा गांधी का चमत्कारिक नेतृत्व था और आधी आबादी यानी स्त्रियों की सहभागिता के लिए उनका विशेष आह्वान था। हर वर्ग और जाति की महिलाएं सामाजिक बंधनों को तोड़कर खुद-ब-खुद मुख्य धारा में शामिल हो रही थीं। कुछ महिलाओं ने नेतृत्वकारी भूमिका भी निभाई थी।
आजादी मिलने के बाद स्त्रियों का राजनीतिक आंदोलनकारी रूप मद्धिम हो गया। इस बीच स्त्रियों की शिक्षा और स्वावलंबन के लिए शासन द्वारा अनेक कार्यक्रम चलाए गए।उनके परंपरागत सामाजिक पिछड़ेपन को दूर करने के प्रयास शुरू हुए,लेकिन सामाजिक-सांस्कृतिक समानता के लिए आंदोलन ७वें दशक के बाद ही शुरू हुए। शासन की रीति-नीति में भी बदलाव दिखाई दिए।इनका असर स्त्री

समूह में ही नहीं,पूरे सामाजिक स्तर पर दिखाई पड़ा। इससे मानसिक बदलाव की व्यापक स्थितियाँ बनीं।वर्तमान समय की नारी अत्यधिक जागरूक और अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति सजग है।महिला संगठनों ने स्त्रियों के मुद्दे उठाए। रूप कुँवर सती कांड हो,मथुरा बलात्कार कांड या राजस्थान की साथिन भंवरी देवी बलात्कार कांड या 2012 का निर्भया कांड हो,स्त्रियों का संगठित आंदोलनकारी रूप दिखाई देता है। दलित स्त्रियों के प्रश्न भी साहित्य और समाज में इसी दौरान उठाए गए। इन सबके बावजूद,यह कहना ज़रूरी है कि मध्य और उच्च वर्ग के अलावा दलित,ग्रामीण,पिछड़े तथा आदिवासी समाज की स्त्रियों के जीवन में अपेक्षित बदलाव के लिए अभी बहुत कुछ करना ज़रूरी है। कभी-कभी लगता है कि पिछले कुछ वर्षों में स्त्री जीवन के सशक्तिकरण और बदलाव का प्रवाह सीमित हो रहा है।

आज स्त्री समाज के सभी क्षेत्रों में अपनी भागीदारी निभा रही है। राजनीतिक हो या सामाजिक, आर्थिक हो या सांस्कृतिक उसके बाद भी यह लड़ाई क्यों? लेकिन सवाल तो यह है कि वह पुरूष की भांति स्वतंत्रता चाहती है। इसीलिए पितृसत्ता का विरोध कर पारम्परिक बेड़ियों को तोड़ना चाहती है।

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में स्त्रीवादी विचार को पनपने का सुअवसर मिला। भूमण्डलीकरण ने अपने तमाम अच्छाईयों एवं बुराईयों के साथ सभी वर्ग की शिक्षित स्त्रियों को घर से बाहर निकलने का अवसर दिया। परिणामस्वरूप स्त्री ने अपने अधिकारों और कर्तव्यों को समझा व समाज में भी इसका बेहतरीन प्रदर्शन किया।

वैसे देखा जाए तो स्त्री-विमर्श वस्तुतः स्वाधीनता के बाद की संकल्पना है। साधारण भाषा में कहा जाए तो स्त्री विमर्श स्त्री के प्रति होने वाले शोषण के खिलाफ संघर्ष है। डॉ० संदीप रणभिरकर के शब्दों में -''स्त्री-विमर्श स्त्री के स्वयं की स्थिति के बारे में सोचने और निर्णय करने का विमर्श है। सदियों से होते आए शोषण और दमन के प्रति स्त्री चेतना ने ही स्त्री-विमर्श को जन्म दिया है।''७

पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने स्त्री समाज को हमेशा अंधकारमय जीवन जीने को मजबूर किया है। लेकिन आज की नारी चेतनशील है जिसे अच्छे-बुरे का ज्ञान है। इसीलिए अब इस व्यवस्था का बहिष्कार कर स्वच्छंदात्मक जीवन जीने को आतुर दिखाई पड़ती है। नारी अस्तित्व को लेकर अपने-अपने समय पर कई विद्वानों ने चिन्ता व्यक्त की है। प्राचीन साहित्य में तुलसीदास जी ने ''ढ़ोल गवार, शूद्र, पशु, नारी-सकल ताड़ना के अधिकारी'' कहकर नारी को प्रताड़ना के पात्र समझा है तो मैथलीशरण गुप्त जी ने ''अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी, आंचल में है दूध और आंखों में पानी'' कहकर नारी के स्थिति पर चिन्ता व्यक्त किया है। प्रसाद ने ''नारी तुम केवल श्रद्धा हो'' कहा है तो शेक्सपियर ने ''दुर्बलता तुम्हारा नाम ही नारी है'' आदि कहकर नारी अस्तित्व को संकीर्ण बताया है पर अब स्थिति कुछ बदली हुई नजर आती है क्योंकि छठी शताब्दी के पहले तक सिर्फ पुरूष लेखकों का अधिकार था। महिला लेखन को काऊच लेखक कहकर हंसी उड़ायी जाती थी परन्तु अब स्त्री -विमर्श का डंका इसलिए बज रहा है क्योंकि आठवें दशक तक आते-आते महिला लेखिकाओं की बाढ़ सी आ गयी। उसके बाद भी प्रसिद्ध लेखिका सीमोन द बोउआर के उक्त कथन महिला समाज में

परिलक्षित होती है-‘‘स्त्री की स्थिति अधीनता की है। स्त्री सदियों से ठगी गई है और यदि उसने कुछ स्वतंत्रता हासिल की है तो बस उतनी ही जितनी पुरूष ने अपनी सुविधा के लिए उसे देनी चाही। यह त्रासदी उस आधे भाग की है, जिसे आधी आबादी कहा जाता है।’’८

नारी मुक्ति से जुड़े अनेक प्रश्न, उन प्रश्नों से जुड़ी सामाजिक, पारिवारिक एवं आर्थिक बेबसी और उससे उत्पन्न स्त्री की मनः स्थिति का चित्रण अनेक स्तरों पर हुआ है। ‘‘साठ के दशक और उसके संघर्ष का अधिकांश इतिहास जागरूक होती हुई स्त्री का अपना रचा हुआ इतिहास है। नगरों एवं महानगरों में शिक्षित एवं नवचेतना युक्त स्त्रियों का एक ऐसा वर्ग तैयार हो गया था जो समाज के विविध क्षेत्र में अपनी कार्य क्षमता प्रमाणित करने के लिए उत्सुक था।’’९

हिन्दी कथा लेखिकाओं ने अपने-अपने लेखन में नारी मन की अनेक समस्याओं को विषय बनाया है। अमृता प्रीतम के रसीदी टिकट, कृष्णा सोबती -मित्रों मरजानी, मन्नू भण्डारी-आपका बंटी, चित्रा मुद्गल -आबां एवं एक जमीन अपनी, ममता कालिया-बेघर, मृदुला गर्ग-कठ गुलाब, मैत्रेयी पुष्पा-चाक एवं अल्मा कबूतरी, प्रभा खेतान के छिन्नमस्ता, पद्मा सचदेव के अब न बनेगी देहरी, राजीसेठ का तत्सम, मेहरून्निसा परवेज का अकेला पलाश, शशि प्रभा शास्त्री की सीढ़ियां, कुसुम अंचल के अपनी-अपनी यात्रा, शैलेश मटियानी की बावन नदियों का संगम, उषा प्रियम्वदा के पचपन खम्बे, लाल दिवार, दीप्ति खण्डेलवाल के प्रतिध्वनियां आदि में नारी संघर्ष को देखा जा सकता है। डॉ. ज्योति किरण के शब्दों में - ‘‘इस समाज में जब स्त्रियां अपनी समझ और काबलियत जाहिर करती हैं तब वह कुलच्छनी मानी जाती हैं, जब वह खुद विवेक से काम करती है तब मर्यादाहीन समझी जाती है। अपनी इच्छाओं, अरमानों के लिए जब वह आत्मविश्वास के साथ लड़ती हैं और गैर समझौतावादी बन जाती है, तब परिवार और समाज के लिए वह चुनौती बन जाती है।’’१० साहित्य-लेखन में स्त्री विमर्श केंद्र में आया तो स्त्री-यौनिकता के सवालों पर बहस हुई और स्त्री-लेखन की एक नई धारा बनी।कहा जाने लगा कि स्त्री-अस्मिता और यौनिकता संबंधी बहसें पश्चिमी नारीवाद से प्रभावित हैं।आज की स्थितियों में कहना होगा कि पितृसत्तात्मकता तथा स्त्रियों को कमतर समझने की प्रवृत्ति के खिलाफ पश्चिम की स्त्रियां हों या भारत की,उनमें आंदोलनकारी प्रवृत्ति रही है। ‘मी टू ’जैसा विषय हो या लड़कियों के पहनावे की बात हो,एक संगठित आवाज़ सुनाई देती है। अगर पश्चिम में अश्वेत स्त्रियाँ अपने स्तर पर रंगभेद के खिलाफ़ एकजुट होती हैं तो यहां भी दलित स्त्रियों के प्रति हिंसा और अन्याय भी व्यापक आंदोलन का रूप ले सकते हैं। यह अलग बात है कि हर जगह कुर्सी और सत्ता की राजनीति इन आवाज़ों को धूमिल करने की कोशिश करती है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकतें हैं कि हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श के रूप में जो लेखन आज उपस्थित है उसका छुटपुट प्रयास वेदों में भी मिलता है। जो स्त्री की सशक्त स्थिति का परिचायक है। वेद मंत्रों की दृष्टा के रूप में उपस्थित स्त्री इसका साक्षात् प्रमाण है। इसके पश्चात् स्त्री लेखन की दृष्टि से कई लेखिकाओं के नाम तथा उनकी रचनाओं का पता चलता है। जो अधिकांशतः स्फुट पद रूप में ही मिलते हैं। थेरियाँ, भक्त कवयित्रियाँ हो या आधुनिककाल की कवयित्रियों का लेखन, सभी ने स्त्री की पराधीनता,उसकी दुर्दशा की ओर ध्यान दिलाने का प्रयास किया है। पचास के दशक से पहले स्त्री

लेखन के जो प्रमाण मिलते हैं,यकीनन वह आज के स्त्री विमर्श की आरंभिक कड़ियाँ हैं,इसे निःसंदेह स्वीकार किया जा सकता है। साथ ही हमें इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि जिस प्रकार समाज स्त्री और पुरुष दोनों से मिलकर बना है, किसी एक के बिना समाज की कल्पना नहीं की जा सकती,उसी प्रकार बिना स्त्री लेखन के साहित्य को पूर्ण साहित्य नहीं कहा जा सकता। अतः पुराने समय के स्त्री लेखन को खोजे जाने की आवश्यकता है ताकि पूर्ण साहित्य की कल्पना को साकार किया जा सके। स्त्रीलेखन होमोजीनियस नहीं है। बस बहस मूल मुद्दे से न हटे,न ही महज फेमिनिस्ट होने को फैशनेबल नारेवाजी के जुमलों से जोड़कर देखा जाए। स्त्री विमर्श एक समतामूलक,लोकतांत्रिक चेतना के जरिए सभी तरह के विषमतामूलक सांचे ढांचे को तोड़कर सर्वसम्मान्य व्यवस्था लाने का सपना देखता है। आधुनिक जीवन की जटिलताएं जिस तरह दिनोंदिन बढ़ती जा रही हैं,स्त्रीलेखन की दिशाएं और दशाएं भी परिवर्तनशील हैं,प्रगतिगामी हैं। सुखद है कि आज का स्त्रीलेखन नए और अलक्षित रास्तों को तलाश रहा है। यह लेखन नई पीढ़ी के बहुरूपिए जीवन की मीमांसा करे,तो बहुआयामी समय की जटिल उलझनों को सुलझा सकता है।

संदर्भ सूची

१. दिलीप मेहरा /डॉ० प्रतीक्षा पटेल ,हिंदी महिला कथाकारों के साहित्य में नारी विमर्श,५६

२. हिंदी साहित्य का इतिहास -डा .रामचन्द्र शुक्ल ,पृ ८२ राधा पब्लिकेशन्स ,नई दिल्ली -संस्करण ; १९९६

३. आजकल :मार्च **2013** - पृष्ठ **20**

४. वहीं -पृष्ठ **29**

५. पंचशील शोध-समीक्षा -पृष्ठ **82**

६. आजकल :मार्च **2013** - पृष्ठ **27**

७. पंचशील शोध-समीक्षा -पृष्ठ **87**

८. आजकल :मार्च **2013** - पृष्ठ **24**

९. आजकल :मार्च **2011** - पृष्ठ **25**

१०. पंचशील शोध-समीक्षा -पृष्ठ **61**